( देश देशान्तरों में प्रकाशित, सबसे सस्ता, उच्च कोटि का आध्यात्मिक—पत्र )

सन्देश नहीं मैं स्वर्ग लोक से का लाई ।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आई ॥

र्षिक मूल्य १॥)　　सम्पादक—श्रीराम शर्मा ।

वर्ष ४　　मथुरा, १ नवम्बर सन् १९४३ ई०　　अङ्क ११

# आत्मा के प्रकाश में वास्तविकता को देखिए !

सारी आपदाऐं, सारे दुःख क्लेश और कुछ नहीं हैं ये केवल स्वप्न हैं। हमारी कठिनाइयां ... के समान हमें दुर्लंघ्य, सारी वस्तुऐं भयंकर और अन्धकार मय प्रतीत होती हैं, परन्तु यह सब ...छ नहीं केवल माया है। भय मत करो, यह नष्ट हो चुकी है। इसे पीस डालो, यह तिरोहित हो ...। इसे पद दलित कर डालो, यह लुप्त होजायगी। डरो मत, इस बात की चिन्ता मत करो कि ...ने बार असफल होना पड़ा है। कोई परवा नहीं। समय अनन्त है। आगे की ओर पैर बढ़ाये ...बार बार प्रयत्न करते रहो, अन्त में चेतना आकर रहेगी।

आपकी रक्षा करने वाला इस संसार में और कोई नहीं है। किसी भी मित्र में ऐसी शक्ति नहीं ...। यह है कि संसार में आप ही अपने सबसे बड़े शत्रु और आप ही सबसे बड़े मित्र हैं। हर ... आपदाओं और दुर्बलताओं के ऊपर आत्मा का प्रकाश डालिए और उसके उजाले में वास्त-...को पहचानिए। स्मरण रखिए प्रकाश के साथ अन्धकार नहीं रह सकता और न आत्म ज्ञान के ... शोकों का अस्तित्व कायम रह सकता है।

सुधा बीज बोने से पहिले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकुट विश्व-हित, मानव को जीना होगा॥

वर्ष ४ } मथुरा, १ नवम्बर सन् १९४३ ई० { अङ्क ११

# अमर राग

[ रचियता—श्री० महावीर प्रसाद विद्यार्थी, टेढ़ा-उन्नाव ]

मेरे प्राणों के अमर राग॥
टकरा—टकरा जिनसे अविरल करती जीवन—धारा क्रन्दन
अभिलाषा आंसू बन बहती क्षत-विक्षत आशा-स्वर्ण-सुमन
हों भस्म शिलाएँ ये जग की धधका दे ऐसी विषम आग।
मेरे प्राणों के अमर राग॥
जाते ठुकराए पग-पग पर चिथड़ों में जिनकी ढकी लाज।
गति हीन, मूक, शोषित, पीड़ित कीड़ों से भी जो तुच्छ आज॥
इन जर्जर नर—कङ्कालों में बन स्वाभिमान की ज्योति जाग।
मेरे प्राणों के अमर राग॥
इठलाती शोणित—धारों पर दानवता करती अट्टहास।
प्रलयङ्कर अस्त्रों-शस्त्रों की नौका पर करती मधु-विलास॥
खिल उठे तुम्हारी लाली से मानवता का कुण्ठित सुहाग।
मेरे प्राणों के अमर राग॥
अविराम धधकती आग जहां फैले नन्दन बन का सुवास।
छलके वसुधा के कण-कण में वह मधुर-प्रेम का तरल हास॥
जल जाए जीवन का कल्मष हो सफल अहिंसा-सत्य-याग।
मेरे प्राणों के अमर राग॥

उतर स्वर्गसे भूमंडल पर 'सत्'की अमर ज्योति आतीहै
वेणु बजाती सत्य-प्रेम की, सुमधुर न्याय गान गातीहै

मथुरा, १ नवम्बर सन् १९४३ ई०

# कलियुग का निवास स्थान

## ( २ )

गत अङ्क की इन्हीं पंक्तियों में बताया जा चुका है कि कलियुग का प्रमुख स्थान स्वर्ण में-पैसे में है। यदि अखंड ज्योति के पाठक अपने जीवन को— सात्विक-सतयुगी बनाना चाहते हैं तो उन्हें अपना जीवनोद्देश्य पैसा बटोरना और मौज उड़ाना छोड़कर आत्मोन्नति बनाना होगा, पैसे को सर्वोच्च स्थान पर न रखकर धर्म और ईश्वर के प्रति आदर भाव बढ़ाना होगा।

परीक्षित ने कलियुग को रहने के लिए जो स्थान बताये थे उनमें धन ही सर्वोपरि है अन्य उसी से संबंधित हैं तो भी उनका स्थान है ही, हम लोगोंको उन भयंकर स्थानों से भी उसीप्रकार सावधान रहना होगा जिस प्रकार सांप की बांबी, सिंह की गुफा, रीछ की झाड़ी के निकट जाते हुए सतर्कता से काम लेते हैं कि कहीं इनमें से हमारे ऊपर खतरनाक आक्रमण न होजाय। परीक्षित ने कलियुगको बताया था कि स्वर्ण के अतिरिक्त झूँठ, जुआ, नशा, व्यभिचार, चोरी और हत्या भी तुम्हारे निवास स्थान होंगे। उन छै स्थानों से बचाव किस प्रकार करना चाहिए, इसका कुछ विवरण नीचे दिया जा रहा है।

झूँठ—"जो बात जैसी हो उसको वैसी ही कह देना" सत्य की यह परिभाषा बहुत ही अपूर्ण लँगड़ी लूली, अनेक शंका संदेहों से भरपूर एवं अव्यवहारिक है। कई बार धर्म की रक्षा और लोक हित के लिए इसमें अपवाद उपस्थित हुआ करते हैं, उन अवसरपर प्रयोग किया हुआ असत्य भी सत्य जैसा उचित होता है। वास्तव में झूँठ से तात्पर्य, छल, कपट, ठगी, ढोंग, धूर्तता, धोखा, बेईमानी, विश्वास घात, से है। बड़े से बड़े लाभ के लिए इन दुष्कर्मों को नहीं किया जाना चाहिए, अनीति पूर्वक किसी के हक का, अधिकार का, अपहरण करना, धोखा देकर विपत्ति में फँसा देना, विश्वास दिलाकर वचन पलट देना यह 'झूँठ' का असली तात्पर्य है। मनोरंजन के लिए या धूर्तता से बचाव करने के लिए "मंत्र को गुप्त रखने" को शास्त्रीय परिपाटी का अवलम्बन किया जा सकता है, वह झूँठ नहीं कहा जायगा। हां किसी के साथ असत्य आचरण करके उसे विपत्ति में नहीं डालना चाहिए।

जुआ—ताश, कौड़ी, फांसे, गोट आदि की सहायता से जो जुआ खेले जाते हैं, जो खेल कानून द्वारा जुआ की परिभाषा में सम्मिलित हैं वे तो जुआ हैं ही पर वास्तव में जुए का क्षेत्र आज बहुत व्यापक होगया है, बुद्धि चातुरी से उन कार्यों को जुआ की परिभाषा और कानून से बचा लिया गया है तो भी असल में वे सब जुआ ही हैं। तेजी मंदी के सट्टे, फीचरके सटे, वायदे के सौदे, लाटरी,दड़ा यह एक खास किस्म के जुए हैं जिन कार्यों में उद्योग परिश्रम, बुद्धि का सामंजस्य नहीं वरन् भाग्य के ऊपर निर्भर रहना पड़े वे कार्य जुआ हैं। आजकल प्रतियोगिताएं भी जुए के रूप में चल पड़ी हैं। किसी पराक्रम के लिए पुरुष्कार देना प्रतियोगिता का उद्देश्य था पर इन दिनों पहेलियां, तीतरों की लड़ाई, घुड़दौड़, पतंगबाजी आदि में जुआ ही चल पड़ा है। यह जुए त्याज्य हैं, धन कमाने का मार्ग शरीर और बुद्धि का परिश्रम ही है, व्यापार वस्तुओं

ाना चाहिए, बातूनी जमा खर्चका नहीं। इससे की आर्थिक परिस्थिति बिगड़ती है, पुरुषार्थ ता घटती है एवं झटके के साथ जो असाधारण ने लाभ होते हैं वे दोनों ही निकृष्ट परिणाम स्थित करते हैं। सब प्रकार के जुओं से बचते केवल वास्तविक व्यापार पर ही निर्भर रहना हिए।

नशा—नशे दो प्रकार के हैं—तम्बाकू, भांग, जा, ताड़ी, चरस, अफीम, शराब, कोकीन आदि तिक नशे हैं इनके सेवन से लाभ किसी प्रकारका ई नहीं हानि शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, नैतिक, ी प्रकार की हैं। अन्य व्यसनों में कुछ प्रत्यक्ष तो भी है पर इन नशोंमें तो वह भी नहीं। बुरा द, बुरी गंध, बुरा फल तीनों ही प्रकार बुराई है। र्खता बश दूसरों की देखा देखी या बहकावे में आकर मनुष्य इनका सेवन करने लगता है फिर इनकी ऐसी आदत पड़ जाती है कि छुड़ाये नहीं छूटती। मानसिक नशा अहङ्कार का होताहै धनका, लका, विद्या का, बुद्धि का, अधिकार का, घमंड किन्हीं किन्हीं को ऐसा होता है कि उसकी खुमारी में शराबी की तरह झूमते रहते हैं, जमीन पर सीधे पांव नहीं धरते, सीधे मुँह बोलते नहीं, हर बात में अकड़ ऐंठ, गुमान गरूर टपकता है यह मानसिक शा है। यह दोनों ही प्रकार के नशे त्याग देने योग्य हैं। इनसे मनुष्य पतन क्लेश और दुखों में ही गिरता है। भूख की तृप्ति के लिए आवश्यकता-नुसार सात्विक आहार करना चाहिए और विनय, सभ्यता, भाईचारा, प्रेम, मनुष्यता को ध्यान में रखते दूसरों से मधुर व्यवहार करना चाहिए।

व्यभिचार—ब्रह्मचर्य की मर्यादा तोड़ने को व्य-भिचार कहते हैं। स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए नियत मर्यादा में काम सेवन करना चाहिए। अगम्य से गमन करना, दबाव, बहकावा, प्रलोभन द्वारा विपरीत पक्ष को काम सेवन के लिए तैयार करना ह व्यभिचार की सीमा में आते हैं। जिस भोग से समाज में किसी प्रकारका अन्याय उत्पन्न नहीं होता एवं स्त्री पुरुष स्वेच्छा से एक दूसरे को स्वीकार करते हैं वही उचित है। व्यभिचारसे बचना चाहिए और शक्ति संचय के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।

चोरी—किसी के उपार्जित धन को बिना उसकी इच्छा के गुप्त रूप से ले लेने को चोरी कहते हैं। दूसरों को उचित भाग दिये बिना स्वयं खाना चोरी है, उपकार के लिए कृतज्ञ न होना चोरी है, अनीति पूर्वक किसी का हक लेना चोरी है, रिश्वत चोरी है, कर्तव्य को पालन न करना चोरी है, प्रकट करने योग्य विचारों को प्रकट न करना चोरी है, आवश्य-कता से अधिक जमा करना चोरी है, इन सब चो-रियों से बचने का प्रयत्न करना चाहिए, अपने हाथ पांव और बुद्धि की धर्म उपार्जित कमाई पर निर्वाह करना एवं पराये धनका आसरा नहीं तकना चाहिए।

हिंसा—मोटे अर्थ में किसी प्राणीकी हत्या करना या दुख देना हिंसा कही जाती है। सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने पर दुष्ट, अत्याचारी, परपीड़क, पापी, कुकर्मी को दंड देना या मार डालना हिंसा नहीं है। वरन् हिंसा वह है जिससे सत्कर्मों में बाधा पड़ती हो, श्रेष्ठ व्यक्तियों को कष्ट होताहो, धर्म की अवनति और अधर्म की उन्नति हो, किसीके उचित अधिकारों का अपहरण किया जाता हो, ऐसे हिंसा पूर्ण कार्यों से दूर रहना चाहिए। मांसाहार तो स्पष्टतः हिंसा है ही, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से दूसरों का शोषण उनके अधिकारों का अपहरण हिंसा है, आप न किसी का अनुचित रीति से सताया जाना सहन करें और न किसी को अनुचित रीतिसे सतावे, इस प्रकार सच्चे अहिंसक बन सकेंगे।

अब कलियुग का आसुरी अधिकार अपने ऊपर से हटा डालने का समय आगया है, आप अपने अन्दर सत्य की सत्ता स्थापित कीजिए। कलियुग जिन स्थानों में रहता है उनसे बचते रहनेका निरंतर प्रयत्न करते रहिए, फिर वह आपके ऊपर अधिकार न जमा सकेगा।

———

## भगवान की प्रेरणा।

( योगी अरविन्द घोष )

इस समय योगियों द्वारा ही संसार में एक विचित्र नवीन परिवर्तन भगवान करना चाहते हैं। योग के प्रकाश स्वरूप परिपूर्ण कार्य के ऊपर ही संसार की भविष्य सृष्टि निर्भर करती है—वह कार्य बड़ा विस्तृत है। पूर्ण योगी पुरुषों द्वारा जो कर्म तैयार होगा, वही भावी जगत का सच्चा काम होगा। पूर्ण योगियों को पैदा किये बिना कभी भी कार्य पूर्ण नहीं हो सकता। अभी तक भक्ति एवं शक्ति को लेकर बहुत से काम हुए हैं, किन्तु पूर्ण ज्ञान का अभाव होने के कारण उनमें कोई भी काम स्थायी नहीं हुआ। भक्ति एवं शक्ति द्वारा संसार में जितने कार्य हुए हैं, वे भगवान के कार्यों के मामूली क्षुद्र अंश हैं। उनसे बहुत कुछ तैयार भी होगया था, किन्तु वह पूर्ण ज्ञान का अभाव होने के कारण अब बिलकुल नष्ट होगया है। इस समय प्रयोजन है आध्यात्म ज्ञान का, प्रगाढ़ प्रेम एवं असाधारण शक्ति का, क्योंकि इनके बिना कर्म की परिपूर्णता नहीं होती। कर्म की पूर्णता इन्हीं के द्वारा ही होगी। ज्ञान पूर्ण होने पर ही कर्म पूर्ण मूर्ति प्राप्त होगी। आज उसी का साधन भी चल रहा है।

ऐ भारत वासियो! ज्ञान में आरूढ़ होजाओ और उसी के सहारे नीरव साधना में चित्त लगाकर काम करते जाओ, बाहरी उत्तेजना में न फँसो, अन्तर में भगवान की दिव्य मूर्ति प्रकट होने दो। स्मरण करलो, तुम्हारी साधना से जो नई चीज पैदा होगी वह संसार भर की एक अपूर्व सम्पत्ति होगी।

## तुम बीच में खड़े हो।

( महात्मा योगानंद जी महाराज )

तुम परमात्मा की आधी शक्ति के मध्य में खड़े हुए हो, तुमसे ऊंचे देव, सिद्ध और अवतार हैं तथा नीचे पशु पक्षी, कीट पतंग आदि हैं, ऊपर वाले केवल मात्र सुख ही भोग रहे हैं और नीचे वाले दुख ही भोग रहे हैं, तुम-मनुष्य ही एक ऐसे हो जो सुख और दुख दोनों एक साथ भोगते हो, यदि तुम चाहो तो नीचे पशु पक्षी भी हो सकते हो और चाहो तो देव, सिद्ध, अवतार भी हो सकते हो।

यदि तुम्हें नीचे जाना है तो खाओ पीओ और और मौज करो, तुम्हें तो सुख के लिए धन चाहिए वह चाहे न्याय से हो अन्याय से, नीचे आने में बाधा या कष्ट नहीं है। पहाड़ से नीचे उतरने में देर नहीं लगती इसी तरह यदि तुम अपने भाग्य को नष्ट करना चाहो तो कर सकते हो परन्तु पीछे तुम्हें महा अनुताप करना पड़ेगा, यदि तुम ऊपर जाना चाहो तो तुम्हें सत्य मिथ्या, न्याय अन्याय, धर्म अधर्म के बड़े बड़े विचार करने पड़ेंगे पर्वत के ऊपर चढ़ने में क्लेश तो है ही, परन्तु क्लेश का फल सुख भी मिलेगा। यदि तुम क्लेशों के दुख को यहीं शिर पर लेलोगे तो परम सुखी होजाओगे।

दोनों बातें तुम्हारे लिये यही हैं क्योंकि तुम बीच में खड़े हो, मध्य में रहने वाले आगे पीछे अच्छी तरह देख सकते हैं, ऐसे ही तुम भी अपने भाग्य के विधाता हो चाहे जो कर सकते हो, तुम्हारे लिए उपयुक्त और अनुकूल समय यही है, समय चूक जाने पर पश्चात्ताप ही हाथ रह जाता है।

# दान में विवेक की आवश्यकता

धर्म का प्रधान लक्षण दान है। भारतीय जनता सदा से धर्म में दिलचस्पी लेती आई है फलस्वरूप दान करने की उसकी प्रवृत्ति सदा रहती है। देशका बौद्धिक अधःपतन होने के साथ साथ दान की पुण्य प्रथा में भी अविवेक का समावेश होगया। आज दान देने और लेने वाले दोनों ही पक्षों ने इस ओर औचित्य का ध्यान रखना छोड़ दिया है।

दान के दो उद्देश्य हैं कि (१) दैवी तत्वों को ऊँचा उठाया जाय। (२) असमर्थों की सहायता की जाय। हिन्दू धर्म में ब्राह्मणों को दान देने की प्रथा है इसका कारण अमुक वंश को महत्व देना नहीं है वरन् यह है कि जो समूह जनता में सदाचार की, ज्ञान की, विवेक की वृद्धि करता है, समाज की सुख शान्ति की रक्षा के लिये निरंतर प्रयत्न शील रहता है उसके भरण पोषण का भार दूसरे लोग उठावें। प्राचीन समय में ब्राह्मण ऐसे ईमानदार ट्रस्टी थे जो दान में आये हुए धन में से अत्यंत स्वल्प भाग अपने निजी निर्वाह में खर्च करते थे और शेष को, गुरुकुल चलाने में, अन्वेषण करने में, ग्रन्थ निर्माण करने में, सत्सग समारोहों में, प्रचार में, यज्ञ में, जीव दया में खर्च कर देते थे। ऐसे विश्वसनीय ट्रस्टियों के हाथ में गई हुई दान की एक एक पाई का सदुपयोग होता था, दुरुपयोग की कोई संभावना न थी इसलिए सर्व साधारणमें ऐसी प्रथा थी कि सत्कर्मोंके निमित्त तथा ब्राह्मण के भरण पोषणके निमित्त जो दान देना होता था उसका वर्गीकरण करने के झंझट में नहीं पड़ते थे अपितु उस सारी दान राशि को सुपात्र, विश्वस्त ब्राह्मण के हाथ में सौंप देते थे कि वह जैसा चाहे उसका उपयोग करे। दान देने वाले की श्रद्धा के साथ ब्राह्मण लोग खिलवाड़ नहीं करते थे जिस उद्देश्य के लिए वह धन था उसमें विश्वासघात नहीं किया जाता था, अमानत में खयानत होने की स्वप्न में भी संभावना न रहती थी।

इसके अतिरिक्त अनाथों, बालकों, अपाहिजों, रोगियों, विपत्ति ग्रस्तों, असमर्थों की सहायता के लिए दान दिया जाता था, जिससे वे लोग अपने कष्टों से छुटकारा पा सकें। दुखियों को देखकर जो दया उमड़ती है उसे सार्थक और फलवती बनाने के लिए असमर्थों को दान दिया जाता है और पुण्य से जो प्रेम होता है उसको सार्थक करने के लिए, संसार में पवित्रता एवं दैवी तत्वों की वृद्धि के लिए, ब्रह्म कर्मों में दान दिया जाता है। यह विवेक युक्त दान 'ब्रह्म दान' कहलाता है जह कर्तव्य युक्त दान 'दया दान' कहा जाता है।

आज इन दोनों ही दानों का रूप बड़ा विकृत हो रहा है। ब्रह्मदान से ब्राह्मण वेश धारी कुपात्र गुलछर्रे उड़ाते हैं, तिलक लगाये, जनेऊ पहने, चोटी बढ़ाये, अनेक ब्राह्मण वेशधारी चारों ओर दिखाई पड़ते हैं, दान प्राप्त करना और उसे बैठकर खाना यह दो ही इन लोगों के काम हैं। दधीचि की तरह अस्थिदान करने वाले, बृहस्पतिके समान देव समाज का पथ प्रदर्शन करने वाले, द्रोणाचार्य की तरह शस्त्र विद्या सिखाने वाले, चरकके समान चिकित्सा करने वाले, परशुराम के समान अन्यायियों को दंड देने वाले, वेद व्यास की तरह ग्रन्थ रचने वाले, नारद के समान प्रचार करने वाले, कपिल के समान दस सहस्र विद्यार्थियों का गुरुकुल चलने वाले, आर्यभट्ट के समान खगोल विद्या का अन्वेषण करने वाले, इन ब्राह्मणों में ढूंढे न मिलेंगे। ब्राह्मण की एक ही कसौटी है कि वह अपना समय और बल परमार्थ में-सर्व भूत व्यापी ईश्वर की पूजा में, लगाता है, बेशक दान लेना ब्राह्मण के छै कर्मों के अन्तर्गत है पर दान देना भी उसके साथ साथ ही लगा हुआ है। जो दान लेता है पर संसार के प्रत्युपकार में अपने को खपा नहीं देता, घुला नहीं देता, वह ब्राह्मण नहीं है, कम से कम दान लेने का अधिकारी वो

किसी भी दशा में नहीं है। आज अनेक संत, महंत, पंडे, पुजारी, पुरोहित, याचक, भिक्षुक ब्राह्मण का बाना धारण किये हुए हैं और दान के धन से अपनी उदर दरी को भर रहे हैं, ब्राह्मणत्व का खाल उनने ओढ़ रखी हैं पर उस खाल के अन्दर ब्राह्मणत्व का प्राण कहीं भी दृष्टि गोचर नहीं होता है।

इसी प्रकार असमर्थों की समस्या बड़ी घृणित हो चली है। हट्टे कट्टे, स्वस्थ व्यक्ति परिश्रम करने की योग्यता होते हुए भी भिक्षा को अपना व्यवसाय बनाये हुए हैं, भूँठ मूँठ अपने को विपत्तिग्रस्त कह कर ठगते हैं, स्वस्थ अपाहिजों का स्वांग बनाते हैं, आंख रहते अन्धे बनते हैं, पांव रहते लँगड़ा कर चलते हैं, लोगों की दया उभार कर अधिक कमाई करने की इच्छा से यह लोग बड़े निर्भयता पूर्ण क्रूर कर्म करते हैं। एक गौ का अंग काट कर दूसरी ग. के अङ्ग को चीरकर उसमें सी देते हैं इस तरह पांच पैर की गौ बनाकर उसके बहाने भिक्षा मांगते हैं। आप शायद विश्वास न करें पर ऐसे भिखारी हैं जो अपने छोटे बच्चों के हाथ पांव तोड़ डालते हैं, आंखें फोड़ देते हैं ताकि उनके सहारे अधिक भिक्षा मिल सके। असमर्थों के नाम पर अधिकांश में समर्थ भिखमंगे मौज मारते हैं, यह लोग वास्तविक असमर्थों का हक खा जाते हैं और उन बेचारे वास्तविक असमर्थों वास्तविक पीड़ितों को उनके भाग से वंचित कर देते हैं।

शास्त्रों में देव भाग और यज्ञ भाग खाने वाले को बड़ा पापी माना गया है, उसकी बड़े कठोर शब्दों में भर्त्सना की गई है। दान का पैसा देव भाग और यज्ञ भाग हैं, जो सच्चे अधिकारी को ही ग्रहण करना चाहिए किन्तु आज तो छप्पन लाख पेशेवर व्यक्ति भिक्षा के लिए हाथ पसारे फिर रहे हैं और प्रतिग्रह लेना अपना 'हक' मान बैठे हैं। इस प्रकार हमारा दान उन कुपात्रों के हाथ में चला जाता है जो किसी प्रकार उसके अधिकारी नहीं है। अविवेक पूर्वक, बिना पात्र कुपात्र का विचार किये, अश्रद्धायुक्त दान केवल व्यर्थ जाता हो सो बात नहीं, वरन् दाता के लिए उलटा घातक होता है उसे नरक में ले जाता है। मनु ने पशु हत्या में मांस खाने वाला, पकाने वाला, बेचने वाला, बध करने वाला, सलाह देने वाला आदि आठ व्यक्तियों को पाप का साझीदार बताया है। इसी प्रकार कुपात्र लोग दान पाकर हराम खोरी, ठगी, धोखाधड़ी, दुराचार, बदमाशी, मलीनता आदि में प्रवृत्त होते हैं इसका पाप उन दाताओं को भी लगता है जो बिना विचारे चाहे किसी को दान देकर अपने अविवेक का परिचय देते हैं।

दान मनुष्यका अत्यंत आवश्यक और अनिवार्य कर्तव्य है। जिसको, जो कुछ देना संभव हो अपनी स्थिति के अनुसार ज्ञान, समय, बल, सेवा, विद्या, पैसा, अन्न आदि का दान करना चाहिए, नित्य करना चाहिए और अवश्य करना चाहिए। इसके बिना न तो आत्मोन्नति हो सकती है और न लोक परलोक में सुख मिल सकता है। पुण्य कर्मों में दान का प्रमुख स्थान है, यह दान विवेक पूर्वक होना चाहिए। ब्राह्मणों को दान देना चाहिए, ब्रह्म कर्मों के लिए दान देना चाहिए जिससे समाज में ज्ञान की, विद्या की, सदाचार की, सद् विचारों की उन्नति हो; यह भली प्रकार छान बीन करनी चाहिए कि जिस व्यक्तिको दान दिया गया है वह सच्चा 'ब्राह्मण' है या नहीं, जिस कार्य में दान किया गया है? उस कार्य का कोई अच्छा फल समाज को मिलेगा या नहीं? यदि आप देखें कि यह दान संसार में सात्विकता की वृद्धि करेगा, मनुष्य जाति की उन्नति में सहायक होगा तो समझिए कि वह दान सार्थक है और उसका फल स्वर्ग के समान सुख दायक प्राप्त होगा। यदि आप ऐसा देखें कि यह दान अमुक निठल्ले व्यक्ति की उदर दरी को कुछ समय तक भरे रहने मात्र का साधन सिद्ध होगा या दान पाया हुआ व्यक्ति अपनी अकर्मण्यता एवं धूर्तता के लिए अधिक प्रोत्साहित होगा तो समझिए कि आपका दान निरर्थक गया और उसका परिणाम नरक के

समान दुखदायी होगा। असमर्थों पीड़ितों, विपत्ति ग्रस्तों को अधिक से अधिक सहायता करनी चाहिए, एक पैसा फेंक कर कर्तव्य की इतिश्री न करनी चाहिए वरन् उनके अभाव को अधिक मात्रा में, अधिक समय के लिए, दूर करने का अधिक प्रयत्न करना चाहिए। बेगार भुगत कर पाई पैसा फेंक देने से दया सार्थक नहीं होती वरन् किसी व्यक्ति को यदि वास्तविक कष्ट हैं तो उस कष्ट को मिटाने के लिए भरपूर सहायता करने का उद्योग करना चाहिए जिससे सच्चा आत्म संतोष प्राप्त हो सके, सच्चे रूप में दया सार्थक हो सके।

स्मरण रखिए 'दान' मनुष्यका आवश्यक कर्तव्य है पर वह सार्थक, पुण्य रूप, सुखदायक तभी हो सकता है जब विवेक पूर्वक परिणाम पर विचार करके श्रद्धा पूर्वक दिया जाय, अन्य प्रकार के दान अधर्म की वृद्धि में सहायक होते हैं इसलिए उनका परिणाम दुखदायी ही होता है।

---

जो मनुष्य अपने भाई से तो प्यार करता नहीं है। और कहता है। कि मैं ईश्वर से प्यार करता हूँ। वह झूँठ बोलता है जो देखा उससे तो द्वेष रखता है वो जो अदृश्य है उससे प्यार कैसे करेगा?

+

जो श्रेष्ठ कार्य करता है। वह ईश्वर के खजाने से मय ब्याज के पाता है।

+

सज्जन मनुष्य बेईमानी से ऊँचा चढ़ना पसंद नहीं करते। वे अपनी ईमानदारी पर ही रहते हैं। चाहे नीचे ही क्यों न बैठना पड़े।

+

# सुख कैसे मिलेगा?

(स्वामी रामतीर्थ)

आत्मा असली जिन्दगी और चोखी नगदी है। यह अनुभव करो और ये भौतिक सुख तुम्हें खोजना शुरू करेंगे। जैसे पतिंगा जलती हुई ज्वाला के पास आता है, जैसे नदी समुद्र में मिलती है, जैसे छोटा कर्मचारी किसी महान सम्राट का आदर सन्मान करता है, ठीक उसी तरह सुख तुम्हारे पास तब आयेंगे जब तुम अपने सच्चे स्वरूप, अपने परमेश्वरीय प्रताप को, सच्चे तेजस्वी आत्मा को पूरी तरह से जान और अनुभव कर चुकोगे।

लोग कहते हैं—"हम चाहते हैं जीवन! कोरी कल्पनायें हमें नहीं चाहिये।" अरे, जीवन क्या वस्तु है? तुम कौनसा जीवन चाहते हो? स्वप्नावस्था का, या गाढ निद्रावस्था का, या जाग्रत अवस्था का? यह सब तो केवल दिखाऊ है। वास्तविक सच्चा जीवन तुम्हारा अपना आपा वा आत्मा है ऐसे कठोर नियम हैं जो इन्द्रियों के द्वारा तुम्हें सदा विषयानंद न भोगने देंगे। अपने आपको इन्द्रियों का दास बनाकर इन्द्रिय लोक के हाथ बेचकर क्या तुम्हारे लिये सुखी होना संभव है। नहीं यह असंभव है। प्रकृति निर्दय, कानून इन्द्रियों के भोग में तुम्हें सुखी न होने देंगे।

---

मनुष्य जब तक मेले से दूर है, तभी तक बाजार का हल्ला सुनता रहता है। किन्तु जब बाजार में आ जाता है तो उसे हल्ले की तरफ ध्यान नहीं रहता। इसी तरह जब तक मनुष्य ईश्वर से दूर है तभी तक तर्क वितर्क करता है, किन्तु पास आने पर सब भूल जाता है।

+

# पूर्वजों की दुहाई देने से क्या लाभ ?

एक बार एक व्यक्ति नौकरीकी तलाश में किसी सरकारी दफ्तर में पहुंचा। पूछने पर उसने कहा कि मैंने दो तीन पुस्तकें अंग्रेजी की पढ़ी हैं और कुछ कुछ हिन्दी जानता हूँ। दफ्तर के अफसर ने कहा हमारे यहां एक चपरासी की जगह खाली है, तनख्वाह १२) मासिक मिलेगी, चाहो तो नौकरी कर सकते हो।

उस व्यक्ति ने मैनेजर से कहा—हुजूर मेरे पिता तहसीलदार थे, बाबा कलक्टर थे परदादा कप्तान थे, मैं इतने ऊंचे खानदान का हूं, वे लोग बड़ी बड़ी तनख्वाहें पाते थे और राज दरबार में आदर होता था फिर मुझे इतनी छोटी हैसियत की और कम तनख्वाह की जगह क्यों मिलनी चाहिए ?

अफसर ने कहा—आपके उस खानदान का मैं आदर करता हूँ और आपके उन प्रशंसनीय पूर्व पुरुषों की कद्र करता हूँ पर खेद है कि ऐसे नर रत्नों के घर में आप जैसे अयोग्य पुरुष पैदा हुए जिन्हें चपरासी से ऊंची जगह नहीं मिल सकती। नौकरी आपको करनी है, इसलिए आपकी योग्यता के अनुरूप ही वेतन मिलेगा, खानदान या पूर्व पुरुषों का बड़प्पन इसमें कुछ भी काम नहीं आसकता।

हम लोग अपने को ऋषियों की संतान कहते हैं, अपने जगद्गुरु होने का दावा करते हैं, और तरह तरह से प्राचीन गाथाओं के आधार पर अपने को बड़ा साबित करते हुए यह आशा रखते हैं कि हमें वही स्थान मिले जो हमारे पूर्वजों को प्राप्त था। परन्तु हम यह भूल जाते हैं कि जितनी योग्यता, कर्मनिष्ठा पूर्वजों में थी क्या उसका थोड़ा अंश भी हममें है ? यदि नहीं है तो हम अपमान और अधोगति के ही योग्य हैं जो कि-आज प्राप्त है। पूर्वजों का गौरव उस समय तक प्राप्त नहीं हो सकता जब तक कि वैसे ही पराक्रम करने का साहस अपने अन्दर उत्पन्न न करलें।

———

# हरि-भजन

( सन्त कबीर )

कबीर कहता जात हूँ, सुनता है सब कोय।
राम कहे होवै भला, नहिं तो भला न होय॥
भगति भजन हरि नाव है, दूजा दुक्ख अपार।
मनसा वाचा कर्मणा, कबीर सुमिरन सार॥
कबीर निर्भर राम जपि जब लगि दीवै बाति।
तेल घटा बाती बुझे, फिर सोवो दिन राति॥
कबीर सोता क्या करै, जागि न जपै मुरारि।
एक दिन सोना चैन से लम्बे पांव पसारि॥
जिहिघट प्रीति न प्रेम रस,पुनि रसना नहिं राम।
ते नर इस संसार में, उपजि खये बे काम॥
कबीर एक न जानियां, बहु जाना क्या होहि।
एकहि ते सब होत हैं, सब ते एक न होहि॥
सब सूं बूझत मैं फिरौं, रहन कहत न कोय।
प्रीति न जोड़ी राम सूं, रहन कहांते होय॥
चलौ चलौ, सब कोइ, कहै, मोहिं अंदेसा और।
साहब सूं परचा नहीं, ये जाइहैं किस ठौर॥
कबीर कुल तौ सो भला, जिहि उपजै हरिदास।
जिहि कुल दास न ऊपजै,सो कुल आक पलास॥
राम जपत दारिद भला, टूटी घर की छानि।
ऊंचे मंदिर जानदे, जहां न सारंग पानि॥
छीर रूप हरि नाम है, नीर आम व्यवहार।
हंस रूप कोइ साध है, सत का जानन हार॥
कबीर हरि के नाम सूं, प्रीति रहै इकतार।
तो मुख तें मोती झड़ैं, हीरा अन्त न पार॥
साईं मेरा बाणियां, सहज करै व्यौपार।
बिन डंडी बिन पालड़े, तोलै सब संसार॥
हिन्दू मूए राम कहि, मुसलमान खुदाइ।
कहैं कबीर सो जीवता, दुहु में कभी न जाइ॥
काबा फिर काशी भया, राम भया रहीम।
मोट चून मैदा भया, बैठि कबीरा जीम॥

———

# गहरी नींद कैसे आवे ?

अन्न जल की तरह जीवन की प्रधान आवश्यकताओं में निद्राका स्थान है। दिन भर काम करने की थकान निद्रा द्वारा पूरी होती है और दूसरे दिन के लिए नवीन बल संचय होता है। गहरी निद्रा का आनंद बड़े बड़े ऐश्वर्यों से अधिक मूल्यवान है। किन्तु कितने ही व्यक्ति इस ईश्वरदत्त महा प्रसादका पूरा पूरा उपभोग नहीं कर पाते। उन्हें अल्प और अधूरी निद्रा आती हैं, जिससे व्यय हुई शक्तियों की पूर्ति नहीं हो पाती इसलिए सदा उदासी, थकान, आलस्य, अनुत्साह और बेचैनी घेरे रहती है। शरीर टूटता रहता है और किसी काम पर मन नहीं लगता अनिद्रा के कारण जीवन अवधि घटती है और स्वास्थ्य गिरता है। जिन्हें अधूरी नींद आती हैं उन्हें स्वप्न बहुत आते हैं और पेट में कब्ज भी हुआ तो डरावने सपने उन्हें भयभीत करते रहते हैं। सचमुच अल्प और अधूरी निद्रा आना एक बुरी विपत्ति है। इस विपत्ति से छुटकारा पाने के लिए डाक्टर फुरिण्टन ने कुछ महत्त्व पूर्ण उपाय बताये हैं। जो नीचे दिये जाते हैं—

(१) सदा खुली हवा में सोओ। यह भय मत करो कि सर्दी लग जायगी या जुकाम हो जायगा। सर्दी से बचने के लिए कपड़े रखो। पर मुँह खुला रखो। बंद मकानों में दरवाजे और खिड़कियां बन्द करके सोने से मस्तिष्क पर विषैला प्रभाव पड़ता है जिससे निद्रा कम हो जाती है।

(२) चारपाई पर अकेले सोओ। बहुत छोटे बालक माता के पास सोवें इस अपवाद को छोड़कर घने से घने मित्रों को भी एक चारपाई पर रात न बितानी चाहिए। पति पत्नी को भी निद्रा के समय अलग अलग ही सोना चाहिए। दो व्यक्तियों के साथ सोने से उनकी शारीरिक गर्मी एवं अंग सञ्चालन क्रिया से दूसरे के ऊपर उत्तेजक प्रभाव पड़ता है जिससे निद्रा के योग्य शिथिलता ठीक तरह नहीं आ पाती।

(३) बिस्तर साफ रखो। ओढ़ने बिछाने के कपड़े स्वच्छ रहने चाहिए। जो कपड़े शरीर को छूते हैं उनका हफ्ते में एक बार धुलना आवश्यक है। नित्य धूप में सुखा लेना तो बहुत ही जरूरी है तकिया ऊँचा न होना चाहिए जहां तक हो सके। बिना तकिये के सोनेकी आदत डालो। सीधे सोओ, मेरु दंड का बहुत मत झुकाओ। ओढ़ने बिछाने के लिए जितने कम कपड़ों में हो सके काम चलाओ।

(४) निद्रा नाश का सबसे बड़ा कारण पाचन क्रिया सबंधी है। यदि पेट भरा हुआ हो और भोजन पच न पाया हो तो अच्छी नींद न आवेगी। वह भोजन वायु पैदा करेगा और वह वायु मस्तिष्क में हलचल उत्पन्न करके अच्छी नींद न आने देगी। इसलिए सोने के समय से चार घण्टा पूर्व भोजन कर लेना चाहिए। संध्या के भोजन में भारी, गरिष्ठ चरपरी, मसालेदार, मादक और उत्तेजक वस्तुएं कदापि न लेनी चाहिए। हलका, सादा, सुपाच्य और और अल्प मात्रा में संध्या का आहार लेना चाहिए।

(५) सोने से आध घण्टे पूर्व नंगे बदन खुली हवा में जल्दी जल्दी टहलते हुए वायु स्नान करना चाहिए। यदि सर्दी अधिक हो तो एक पतला कपड़ा ओढ़ कर वायु स्नान करना उचित है।

(६) कई लोगों को सोते समय दिमाग पर अधिक जोर न डालने वाली पुस्तकें पढ़ने से जल्दी नींद आती है जिन्हें यह प्रयोग हितकर हो वे इसका प्रयोग कर सकते हैं।

(७) सोते समय शरीर को बिलकुल ढीला छोड़दें। डाक्टर लाटसन इस उपाय को बहुत ही विश्वासनीय बताते हैं उनका कथन है कि—सोते समय ऐसी भावना करनी चाहिए-मानों किसी नीले

रंग के अथाह सागर पर तैरते हुए हम बहे जा रहे हैं। सब अंगों को बिलकुल शिथिल कर देने और नीले जल का ध्यान करने से निद्रा बहुत जल्द आती है।

( ८ ) सोने से पूर्व गहरी श्वास प्रश्वास क्रिया करनी चाहिए। झटका देकर जल्दी जल्दी सांस लेने की जरूरत नहीं है। बड़ी शान्ति स्थिरता और सावधानी से लंबा गहरा और पूरा श्वांस धीरे २ खींचना चाहिए और उसी तरह धीरे धीरे पूरा श्वांस छोड़ना चाहिए। दस पन्द्रह मिनट इस क्रिया को करते रहने से निद्रा आने लगती हैं।

( ९ ) आत्म सूचना का प्रभाव मस्तिष्क पर अवश्य पड़ता है। चारपाई पर पड़ने के बाद मन ही मन ऐसी दृढ़ भावना करनी चाहिए कि मुझे गहरी निद्रा आ रही है, पलक भारी हो रहे हैं, आंखें झपक रही हैं, अब नींद में ही जा रहा हूँ। कल्पना के साथ साथ व्यवहार रूप में भी नींद की बनावटी झपकियां लेनी चाहिए, यह आत्म सूचना निद्रा बुलाने में अव्यर्थ साबित होती है।

( १० ) अक्सर भय, आशंका, चिन्ता, दुख एवं बुरे भविष्य की कल्पना से निद्रा उचट जाती है या अधूरी नींद आती है। इसलिए सोते समय अपने सुन्दर भविष्य की कल्पना किया कीजिए। धन सब से प्रिय वस्तु लगती है, यदि सोते समय धन की देवी लक्ष्मी जी की मनोहर मूर्ति का ध्यान किया जाय तो मस्तिष्क में शान्ति एवं संतोष प्राप्त होता है जिससे निद्रा के शीघ्र आने में बहुत सहायता मिलती है।

पाठक इन उपायों को काम में लाकर गहरी और पूरी निद्रा का आनंद अनुभव कर सकते हैं।

---

# मृत्यु का भय छोड़ दीजिए

( महात्मा गान्धी )

बालक मरें, चाहे जवान या बूढ़े मरें हम इससे भयभीत क्यों हों ? कोई पल ऐसा नहीं जाता जब इस जगत में कहीं किसी का जन्म और कहीं किसी की मृत्यु होती है। पैदा होने पर खुशियां मनाना और मौत से डरना बड़ी मूर्खता है, यह बात हमें अवश्य सदैव अनुभव करनी चाहिए। जो लोग आत्मवादी हैं,—और हममें कौन हिन्दू, मुसलमान या पारसी ऐसा होगा जो आत्मा के अस्तित्व को न मानता होगा ?—वे जानते हैं कि आत्मा कभी मरती नहीं। यही नहीं, बल्कि जीवित और मृत समस्त प्राणी एक ही हैं, उनके गुण भी एक ही हैं। इस दशा में, जबकि जगत में उत्पत्ति और लय पल पल पर होता ही रहता है, हम क्यों खुशियां मनावें ? और किस लिये शोक करें ? सारे देश को यदि हम अपना परिवार मानें—देश में जहां कहीं किसी का जन्म हुआ हो, उसे अपने यहां ही हुआ मानें—तो कितने जन्मोत्सव मनाइयेगा ? देश में जहां जहां मौतें हों उन सबके लिये यदि हम रोते रहें तो हमारी आंखों के आंसू कभी बन्द ही न हों। यह सोचकर हमें मृत्यु का भय छोड़ देना चाहिए।

अन्य देशोंकी अपेक्षा प्रत्येक भारतवासी अधिक ज्ञानी, अधिक आत्मवादी होने का दावा रखता है, तिस पर भी मौत के सामने जितने दीन हम हो जाते हैं उतने और लोग शायद ही होते हों। और उनमें भी मेरा खयाल है कि हिन्दू लोग जितने अधीर हो जाते हैं उतने भारत के दूसरे लोग नहीं। अपने यहां किसी का जन्म होते ही हमारे घरों में आनंद मंगल उमड़ पड़ता है और जब कोई मर जाताहै तब इतना रोना पीटना मचता है कि आस पास के लोग भी हैरान होजाते हैं। हमें इस अज्ञान जन्य हर्ष शोक को छोड़ ही देना चाहिए।

# पाश्चात्यों की अन्धी नकल।

बेशक पाश्चात्य देशों के निवासी बड़े श्रमशील हैं, वे समय का महत्व जानते हैं, जो लोग समयकी उपयोगिता को समझते हैं वे ही संसार में धन तथा गौरव को प्राप्त करते हैं। उद्योगी पुरुष बेकार मटर गश्ती में अपना समय बर्बाद नहीं करते वरन् एक एक क्षण के सदुपयोग का ध्यान रखते हैं, इसका तात्पर्य यह नहीं कि वे कमाई में ऐसे चिपट जाते हैं कि जीवन सूखा या शुष्क होजाय। दिन निकलने से लेकर रात के बारह बजे तक सेठ लोगों की तरह वे दुकान की गद्दी पर नहीं पड़े रहते और न निठल्लों की तरह ताश गंजफा खेलने या बेकार गाल बजाते फिरने में अपना और दूसरों का समय बरबाद करते फिरतेहैं। उनके सब काम नियम बद्ध होते हैं, जिस कार्य के लिए जितना समय नियत है उस कार्य में उतना ही समय लगावेंगे। बड़े बड़े जिम्मेदारी के उच्च पदों पर भी काम करने वाले वे लोग पुस्तकें पढ़ने, मित्रों से मिलने, खेलने, मनोरंजन करने, लेख लिखने के लिए समय निकालते हैं, जीवन को सरस बनाये रखने का भी नियम रखते हैं, साथ ही पूरे समय तक राजकीय, व्यापारिक या अन्य प्रधान कार्य क्रमों में जुटे रहते हैं, समय के सदुपयोग के कारण उस समाज में साधारण श्रेणी के व्यक्ति बहुत ज्ञान, धन, मान का उपार्जन कर लेते हैं और स्वस्थ एवं प्रसन्न जीवन बिताते हैं।

हम लोग यूरोपियन लोगोंकी भद्दी नकल बनाना सीखे हैं, फैशन बनाने में, विदेशी भाषा बोलने में उनसे आगे बढ़ जाते हैं पर अच्छी आदतों की हवा तक भी ग्रहण नहीं करते। जोंक गाय के थन से चिपट कर दूध को नहीं लेती वरन् खून ही पीती है हम लोग फैशन और मिजाज से आधे साहब बनकर अपने को फिजूल खर्च और दुर्गुणी बना लेते हैं पर उनके सद्गुणों की नकल करना बिलकुल भूल जातेहैं।

---

# ढोंग के घातक कुसंस्कार।

(श्री० स्वामी विवेकानंद जी महाराज)

---

मैं आप लोगों को घोर नास्तिक देखना पसंद करूंगा। लेकिन कुसंस्कारों से भरे मूर्ख देखना न चाहूँगा। क्योंकि नास्तिकों में कुछ न कुछ तो जीवन होता है। उनके सुधार की तो आशा है क्योंकि वे मुर्दे नहीं होते। लेकिन अगर मस्तिष्क में कुसंस्कार घुस जाता है तो वह बिलकुल बेकार होजाता है, दिमाग बिलकुल फिर जाता है। मृत्यु के कीड़े उसके शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। तुम्हें इनका परित्याग करना होगा। मैं निर्भीक साहसी लोगों को चाहता हूँ। मैं चाहताहूँ कि लोगों में ताजा खून हो, स्नायुओं में तेजी हो, पेशियां लोहे की तरह सख्त हों। मस्तिष्क को बेकार और कमजोर बनाने वाले भावों की आवश्यकता नहीं है। इन्हें छोड़ दो। सब तरह के गुप्त भावों की ओर दृष्टि डालना छोड़दो। धर्म में कोई गुप्त भाव नहीं। ऋद्धि सिद्धियों की अलौकिकता के पीछे पड़ना कुसंस्कार और दुर्बलता के चिन्ह हैं वे अवनति और मृत्युके चिन्ह हैं। इसलिए उनसे सदा सावधान रहो। तेजस्वी बनो और खुद अपने पैरों पर खड़े हो। मैं हिमालय की चोटी और कन्दराओं में गया था। मैं सन्यासी हूँ और गत चौदह वर्षों से पैदल ही चारों तरफ घूमता फिरता हूं। मैं आपसे सच सच कहता हूँ कि इस तरह के गुप्त चमत्कार कहीं पर भी नहीं हैं। इन सब बुरे संस्कारों के पीछे कभी न दौड़ो। तुम्हारे और तुम्हारी संपूर्ण जातिके लिए इससे तो नास्तिक होना अच्छा है किन्तु इस तरह कुसंस्कार पूर्ण होना अवनति और मृत्यु का कारण है।

---

## ईसप की नीति शिक्षा।

(१)

एक चोर कहीं से मुर्गा चुरा लाया और घर आकर उसे मारने लगा। मुर्गा बड़ी बिनती के साथ चोर से कहने लगा—मैं तो बड़ा उपकारी हूं लोगों का समय पर जगाकर उनकी निस्वार्थ सेवा करता हूं कृपया मुझे मत मारिये। चोर ने कहा—"सोते हुए लोगों को जगाकर तूही मेरे काम में बड़ी बाधा डालता है इसलिए तुझे तो और भी जल्दी मारूंगा।"

दुष्ट लोग सज्जनों को अपने मार्ग का कांटा समझ कर उनसे घोर शत्रुता रखते हैं।

(२)

एक रास्तागीर कुए की मुंडेर पर पड़ा सो रहा था। उधर से तकदीर देवी उड़ती हुई निकलीं। उन्होंने मुसाफिर को स्वप्न में कहा—मूर्ख, धीरे से उठ बैठ और कुए से हटकर सो, नहीं तो करवट बदलते ही कुए में गिर पड़ेगा और व्यर्थ ही मुझे दोष देगा।

अपनी मूर्खता से लोग अनेक विपत्तियां बुला लेते हैं और फिर भाग्य को दोष देते हैं।

(३)

गाड़ी के पहिये चें चें करते हुए चल रहे थे। गाड़ीवान ने कहा-बैल जो बोझा ढोते हैं चुप हैं पर यह दुष्ट बिना कारण चिल्ल पों मचा रहे हैं!

काम करने वाले चुप रहते हैं और निकम्मे बढ़ बढ़ाते हैं।

(४)

एक कोयले वाले के पास बड़ा मकान था उसने खाली हिस्से में धोबी को किरायेदार रख लिया। धोबी ने देखा कि कितना ही बचकर क्यों न रहा जाय कोयलेकी गर्द उड़कर जरूर आतीहै और उसके धुले हुए सफेद कपड़ों को मैला कर देती है।

धोबी ने उसका घर यह कहते हुए खाली कर दिया कि-जिस स्थान पर जो रहता है वह वहां के असर से बच नहीं सकता।

---

## (कुरान की शिक्षा)

अल्लाह की राह में खर्च करो और अपने हाथों अपने को विनाश में न डालो और उपकार करो। निस्संदेह अल्लाह उपकारी लोगों को मित्र बनाता है।

—सूरये बकर १।२।२३

गुप्त तथा प्रकट पापों को छोड़दो जो लोग पाप कमाते हैं उनको अपने कृत्य का परिणाम शीघ्र प्राप्त हो जायगा। —सूरये माइदा २।८।१४।११

नम्रता से उत्तर देना और क्षमा करना उस दान से अधिक उत्तम है जिसके पीछे किसी प्रकार का कष्ट हो। अल्लाह धनी और सहनशील है।

—सूरये बकर १।२।३६।३

जो लोग अपने धन को अल्लाह के मार्ग में खर्च करते हैं और फिर किसी पर अहसान नहीं जताते और न लेने वालों को किसी प्रकार का कष्ट पहुंचाते हैं, उनको उनके दिये का फल उनके पालन कर्ता की ओर से प्राप्त होगा और न तो उन पर किसी प्रकार आतंक होगा और न वे शोक ग्रस्त ही होंगे!

—सूरये बकर १।२।३६।२

सत्य को सत्य (सिद्ध) कर और मिथ्या को मिथ्या (सिद्ध) कर भले ही पापी सहमत न होंगे।

—सूरये अन्फाल २।९।१

जो मनुष्य तुम्हारे साथ युद्ध करे तुम भी अल्लाह के मार्ग में उनसे युद्ध करो और अत्याचार न करो। निस्संदेह अल्लाह अत्याचारियों से प्रसन्न नहीं होता।

—सूरये बकर १।२।२४

---

### ❀ सात्विक सहायतायें ❀

इस मास ज्ञान यज्ञ के लिए निम्नलिखित महानुभावों ने अपनी धर्म उपार्जित कमाई में से निम्न लिखित सात्विक सहायतायें भेजी हैं। अखंडज्योति इनके प्रति अपनी आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट करती है।

१५) श्रीमती माताजी महारानी साहिबा, मैनपुरीस्टेट
१०) श्री० के० ए० भैया, वर्धा।
५) श्री० भीमराव सोलंकी युद्ध सैनिक।
१) श्री० सुरेश शुक्ल, मन्चेरा।

# मेरी मथुरा यात्रा ।

( श्री० विद्यादत्त गोपालदत्त शुक्ल, सोहागपुर )

पिछले तीन वर्षों से मैं अखण्ड ज्योति का ग्राहक हूं। यों तो मेरे यहां कई भाषाओं के करीब २० धार्मिक पत्रिकाऐं आती हैं परन्तु उन सब में अखंड ज्योति मुझे विशेष रुचिकर होती है। इसकी लेखन शैली ऐसी है जो गले से नीचे दूध की तरह उतरती जाती है। इस वर्ष हाथ के बने स्वदेशी कागज में तो ऐसी सात्विकता रही कि उसे स्पर्श करते ही ताड़ पत्र और भोजपत्र पर लिखे प्राचीन ऋषि प्रणीत ग्रन्थों की तरह सहज श्रद्धा उत्पन्न होती थी। ऐसे ही अनेक आकर्षणों के कारण अखंड ज्योति संपादक से मिलने की मेरे मनमें तीव्र उत्कंठा जागृत हो आई और पिछले मास अपने इस वृद्ध शरीर को मथुरा घसीट ले गया।

मैं सत्संग प्रेमी हूँ। विगत तीस वर्षों से उच्च कोटि की आत्माओं के सम्पर्क में बड़ी गम्भीरता पूर्वक मैं आता रहा हूं। इसलिए स्वभावतः मुझे ऐसे व्यक्तियों का नीर क्षीर परीक्षण करने का बहुत कुछ अनुभव हो चला है। अपनी उसी छोटी सी योग्यता के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि आचार्य श्रीराम शर्मा एक विलक्षण पुरुष हैं। इस दुर्बल काय अस्थि पंजर तपस्वी के चारों ओर एक ऐसा प्रभावशाली तेज मण्डल छाया रहता है जिसके निकट जाते ही अनेक प्रकार के संदेह, उद्वेग, शंका, वासना, विकार अपने आप शान्त होजाते हैं और उसी क्षण संतोष शान्ति, पवित्रता, एवं आस्तिकता का सञ्चार होता है।

इस महा पंडित की विद्या अगाध है। वेदों का, शास्त्रों का, दर्शनों का, पुराणों का, इनका अध्ययन गम्भीर है। ईसाई, इस्लाम, पारसी, बौद्ध तथा भारत में प्रचलित अनेक मत मतान्तरों के धर्म ग्रन्थों का इन्होंने पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया है। मनुष्य जीवनकी असंख्य समस्याओं पर विविध दार्शनिक दृष्टिकोणों से इनके बड़े सुलझे हुए स्पष्ट विचार हैं। पाश्चात्य भौतिक वाद और पूर्वीय आध्यात्मवाद को एक स्थान पर केन्द्रीभूत करके एक ऐसी त्रिवेणी आपकी विचार धारा में प्रवाहित होती है जो नई रोशनी के लोगों को जितनी पसंद आती है उतनी ही प्राचीन परिपाटी वाले को भी हृदय ग्राही होती है।

उच्च चरित्र, आदर्श सदाचार, निष्कपट आचरण, बालकों का सा भोलापन, दूध सा स्वच्छ हृदय, ईश्वर ने इनको दिया है। एक सच्चे ब्राह्मण को जैसा तपस्वी, त्यागी, उदार, अपरिग्रही, निर्लोभ, परोपकारी, सत्यनिष्ठ होना चाहिए उस आदर्श की मूर्तिमान प्रतिमा इस कलियुग में जब हम देखते हैं तो विश्वास होता है कि भारत का ऋषित्व अभी जीवित है और उसके द्वारा यह देश एक दिन फिर अपने आत्मिक बल से संसार का पथ प्रदर्शन करेगा।

एक छोटे से मकान में अखंड ज्योति का छोटा सा दफ्तर है। बाहरी ठाट बाट वहां कुछ नहीं, यह सादगी इस तड़क भड़क की दुनियां को छोटी वस्तु जंचेगी। ठाट बाट से महत्ता को नापने वाले लोगों की निगाह में यह एक छोटा सा दुर्बल प्रयत्न मालूम होगा, पर जिनमें आत्मिक परख है, जिनमें थोड़ी भी सूक्ष्म दृष्टि है, जिनमें सत्य को पहचानने की जरा सी भी क्षमता है वे देखेंगे कि यह ईश्वरीय सत्य अत्यंत प्रबल शक्ति छिपाये बैठा है, यह तपस्या का महान संस्थान आगे चलकर पाप ताप से पीड़ित करोड़ों व्यक्तियों को सत्य का सन्देश सुनावेगा और उन्हें आत्मिक शान्ति प्रदान करेगा।

दस दिन मथुरा रहकर मैं वापिस लौटा। इन दिनों में कितना आत्म बल लेकर मैं लौटा हूँ इसे किस प्रकार प्रकट करूं? मेरा अनुमान है कि अब तक के लम्बे जीवन में यह दस दिन इतने महत्व पूर्ण हैं कि इनपर पिछली सारी जिन्दगी को न्योछावर किया जा सकता है।

---

# बड़ी उम्र में पिता बनना चाहिए

अधिक आयु में संतानोत्पान करना कई दृष्टियों से लाभदायक है। प्रो० रेल्ड फोल्ड ने इस संबंध में गहरी खोज बीन की है और उन्होंने अनेक सबूतों के आधार पर सिद्ध किया है कि नई उम्र के लड़कों से जो संतान उत्पन्न होती है वह उजड्ड, मूर्ख एवं दुर्गुणी होती है। कारण यह है कि नई उम्र के युवकों का शारीरिक और मानसिक विकास बहुत कम होता है, इसलिए उन अविकसित युवकों की संतानभी महत्व पूर्ण सद्‌गुणोंसे वंचित रह जातीहै।

अनेक किस्से कहानियों में ऐसी गाथाएं मिलती हैं जिनमें किसी पिता के बड़े बेटे को अल्प बुद्धि और छोटे बेटे को बुद्धिमान बताया जाता है। सच मुच यह तथ्य ठीक है। अधिक आयु वाले पुरुष से जो बच्चा उत्पन्न होता है वह अपेक्षा कृत अधिक पराक्रमी और प्रतिभाशाली होता है। बीस बाईस वर्ष से कम उम्र के पिताओं की संतान स्वास्थ्य की दृष्टि से भी निर्बल होती है और मानसिक दृष्टि से भी। बाईस से तीस वर्ष तक की उम्र के पिताओं के बच्चे खूब तन्दुरुस्त होते हैं और साधारणतः होशियार भी होते हैं। तीस से ऊँची उम्र के पिता द्वारा प्रखर बुद्धि के बालक पैदा होते हैं। चालीस से ऊपर की आयु में उत्पन्न हुआ बालक स्वास्थ्य की दृष्टि से कुछ हलका भले ही रहे पर बुद्धि में असाधारण होता है।

प्रो० रेल्ड फोल्ड ने अपनी पुस्तक में असंख्य प्रमाण एकत्रित करके प्रकाशित किये हैं जो आयु संबंधी उपरोक्त तथ्यों की पुष्टि करते हैं। गेटे, स्पिलर, शेक्स पियर, रैफल, एलार्ड मैकाले, गोल्ड-स्मिथ, फेड्रिक दी ग्रेट, ग्रान्ट, सिकन्दर, नेपोलियन, रूजवेल्ट आदि महापुरुष अधेड़ माता पिताओं के रज वीर्य से पैदा हुए थे। चालीस से पचास वर्ष के बीच की आयु में उत्पन्न हुए बालक देश के नेता, धुरंधर विद्वान गंभीर एवं बुद्धिमान होते हैं, प्रिंस बिस्मार्क, क्रामवेल, ग्लेडस्टोन, कीटो जैसे प्रतिभाशाली पंडित ढलती उम्र के पिताओं से पैदा हुए थे। जेलखानों में बन्द अपराधियों की ढूंढ खोज करने से जाना गया है कि उनमें से तीन चौथाई ऐसे हैं जो किशोर अवस्था के पिताओं के वीर्य से उत्पन्नहैं, कारण यह है कि चढ़ती उम्र में शरारत और ना समझी अधिक होती है इसलिए यह गुण संतान में भी उतर आते हैं।

कुछ विशेष उदाहरण ऐसे भी मिलते हैं जिनसे उपरोक्त सिद्धान्तकी पुष्टि नहीं होती। ऐसे उदाहरणों के बारे में जांच करने पर पता चलता है कि उनके माता पिता असाधारण रूप से बाल्यकाल में ही वृद्धों जैसी बुद्धिमत्ता संग्रह कर चुके थे, या फिर वह जन्मा हुआ बालक पूर्व जन्मोंके कोई विशेष संस्कार अपने में लिये हुए हो, यह भी हो सकता है कि नई उम्रकी संतान बुद्धिमान निकल आवे और ढलती उम्र की मूर्ख या दुर्गुणी निकले। परन्तु ये अपवाद हैं जो थोड़े से ही होते हैं।

आधुनिक शोधें जितनी खोज और गहराई के साथ की जाती हैं उतना ही प्राचीन स्वर्ण सिद्धान्तों के समीप पहुंचती जाती हैं। शास्त्रकारों ने दीर्घकाल तक ब्रह्मचर्य रखने और बड़ी उम्र में सन्तानोत्पादन करने का आदेश किया है उसके असंख्य लाभ हैं। उन लाभों में से एक लाभ यह प्रकाश में आया है कि सन्तान ऐसी उत्पन्न होती है जो माता पिता को सन्तोष देसके, उसे पाकर उनका मन संतुष्ट होजाय।

कामोत्तेजना का जितना जोश पच्चीस वर्ष से नीचे होता है उतना आगे चलकर नहीं रहता। इसलिए इससे अधिक आयु में विवाह करने पर अमर्यादित वीर्यपात करने की मूर्खता उतनी नहीं होती विवेक की मात्रा बढ़ने से वे उच्छृङ्खलताऐं नहीं होतीं जिनकी नई उम्र में अधिक सम्भावना रहती है। इसके अतिरिक्त वीर्यरक्षा के शारीरिक एवं मानसिक बल बढ़ने का लाभ तो प्रत्यक्ष ही है।

गीता का सन्देश—

# धर्म को आरम्भ करो।

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्॥
गीता २। ४०

**अर्थ**—इसके आरंभ का नाश नहीं होता और न उलटा फल निकलता है। इस धर्म का थोड़ा सा भी साधन महान् भय से रक्षा करता है।

धर्म के मार्ग पर चलते हुए, आध्यात्मिक साधना आरंभ करते हुए लोग अक्सर ऐसा संदेह किया करते हैं कि यदि इस मार्ग पर पूरी तरह न चलसके यदि साधन बीच में ही टूट गया तो देवता रुष्ट हो जायेंगे और उनके कोप से कहीं उलटा फल न उपस्थित होजाय। यदि धर्म का कार्य क्रम आगे न चल सका तो कहीं उपहास का भाजन न बनना पड़े हानि या निन्दा सहन न करनी पड़े।

इस प्रकार के संकल्प विकल्प उठाने वालों को गीता आश्वासन देती है कि इस प्रकार की कोई बात नहीं हैं अच्छे कर्म का बुरा फल किसी प्रकार नहीं निकल सकता है। यदि थोड़ी या अधूरी धर्म साधना की गई हैं तो भी वह लाभदायक ही सिद्ध होगी, शुभ कर्मों में ऐसा आकर्षण है कि उन्हें एक बार थोड़ा सा करने पर फिर उनका चस्का लग जाता है और बार बार श्रेष्ठ कर्म करने की इच्छा होती हैं। उनका ऐसा बीज रूप संस्कार जम जाता जो अवसर पाते ही फिर उग आताहै। ग्रीष्मऋतु में घास सूख जाती है उसका दर्शन होना भी कठिन हो जाता है परन्तु वर्षा होते ही उसकी सूखी हुई जड़ें जमीन के अन्दर फिर हरी हो जाती हैं और घास का भूमि पर बड़ा भारी विस्तार दिखाई पड़ने लगता हैं। इसी प्रकार शुभ कर्म का बीज जम जाने पर उस आरंभ का फिर कभी नाश नहीं होता, अभ्यास छूट जाने और बुरी परिस्थिति में पड़जाने से पहले ही कुछ कियों का आधिक्य होजाय पर जब कभी भी अनुकूल अवसर मिलेगा उस थोड़े से धर्म संस्कार का बीज हरा होजायगा और फिर धर्म में प्रवृत्ति बढ़ जायगी।

उलटा फल निकलने का कोई कारण नहीं। आप कुछ दिन दूध घी सेवन करें और फिर वह प्राप्त न हो तो ऐसा नहीं होगा कि सेवन किया हुआ दूध घी कोई नुकसान करे। थोड़े दिनों या थोड़ी मात्रा में पौष्टिक पदार्थ सेवन किये थे तो उसी अनुपात से थोड़ा लाभ प्राप्त होगा, पर होगा अवश्य, ऐसा नहीं हो सकता कि वह निरर्थक जाय या कोई हानि उपस्थित करे। किसी महात्मा के साथ सत्संग के थोड़े क्षण, तीर्थ यात्रा में लगाया हुआ थोड़ा समय, किसी पुनीत कार्य में किया हुआ थोड़ा सा दान, सच्चे हृदय से की हुई ईश्वर की थोड़ी सी प्रार्थना, क्या कभी व्यर्थ जाती है? शुभ कर्मों को अधिक मात्रा में, अधिक समय, लगातार करते रहा जाय तो बहुत ही उत्तम है पर यदि वे थोड़ी मात्रामें ही, बीच बीच में छूट जांय तो भी अपना उत्तम फल अवश्य देंगे। पुण्य करते पाप बनजाने की अव्यवस्था ईश्वर के सुव्यवस्थित शासन में नहीं हो सकती।

गीता कहती हैं कि इस धर्म का थोड़ासा भी आरंभ भय से रक्षा करता है। पापों का परिणाम दारुण दुख देने वाला, महान भय उत्पन्न करने वाला होता है, यदि धर्म मार्ग में थोड़ा भी पदार्पण किया है तो उस ओर रुचि बढ़ेगी, और अधिक मात्रा में शुभ कर्मों का संपादन होने लगेगा। पुण्य फल के कारण मनुष्य सहज ही उस महान भय से छुटकारा पा सकता है, जो पापियों को असह्य वेदना के साथ घुट घुट कर सहन करना पड़ता है।

जैसे भी बन पड़े धर्म का अवसर आगे आजाने पर उसे चूकना न चाहिए, इस प्रकार थोड़ा थोड़ाभी सत्कर्म करते रहा जाय तो एक दिन उसकी जड़ें बहुत मजबूत होकर जीवन को पूर्ण रूप से धर्ममय बना देंगी।

———

# एक महात्मा जी की भविष्य वाणियां।

हमारे एक मित्र को अपनी तीर्थ यात्रा में एक वयोवृद्ध तपस्वी महात्मा के दर्शन हुए। यह महात्मा बीस वर्ष से बिलकुल नंगे रहते हैं और वृक्षों की पत्तियां खाते हैं। इन महात्मा जी से बड़ी विनय के उपरान्त कुछ सामयिक समस्याओं पर जानकारी प्राप्त हुई वह इस प्रकार हैं।

(१) महात्मा गांधी आदि प्रमुख राष्ट्रीय नेता इस वर्ष बन्दीग्रह से छूट जायेंगे। (२) भारत को युद्ध के बाद कुछ शासनाधिकार और प्राप्त होंगे। (३) महायुद्धका अंत अगले वर्ष दिखाई दे जायगा (४) युद्ध जन्य परिस्थितियों से उत्पन्न हुई कठिनाइयां अभी चार पांच वर्ष संसार को परेशान करेंगी (५) हिन्दू जाति में बड़ा भारी सामाजिक परिवर्तन होगा, इसकी सारी कुरीतियां और कमजोरियां दस पन्द्रह वर्ष के भीतर ही निकल जायगी और वह अपना प्राचीन गौरव पुनः प्राप्त करेगी। (६) सम्वत् २००० के बाद धर्म, विवेक, ज्ञान, न्याय और सत्य की बड़ी तीव्र गति से वृद्धि होगी। पाप भावनाएं बहुत ही कम रह जायेंगी। (७) भारत में त्यागी, तपस्वी ज्ञानवान और कर्तव्य परायण ब्राह्मण वृत्ति के लोगों की संख्या बहुत बढ़ेगी। नई पीढ़ी के यह स्वार्थ त्यागी कार्यकर्ता भारत भूमि की दुर्दशा का अन्त कर देंगे। (८) ईश्वरीय दिव्य शक्ति का अब संसार में अवतरण हो रहा है उसकी प्रेरणा से असंख्य महापुरुष उत्पन्न होकर बड़े बड़े धर्म वर्धक कार्यों को सहज ही पूरा करेंगे (९) ईश्वर की इच्छा से सर्व साधारण के मनमें धर्म भावनाएं उत्पन्न होंगी और वे खूब फलेंगी फूलेंगी (१०) अभी दो तीन वर्ष संसार के लिए बहुत कष्टकारक हैं, इनमें अनेक प्रकार की दैविक, दैहिक, भौतिक विपत्तियां सतावेंगी।

पाठक उपरोक्त बातों को नोट करलें और देखें कि यह भविष्य वाणियां कहां तक सत्य होती हैं।

# प्रभु-नाम का स्मरण।

(ऋषि दयानन्द)

"यस्य नाम महद्यशः" यजु० अ० ३२ मं० ३

परमेश्वर का नाम लेना बड़े यश अर्थात् धर्मयुक्त कामों का करना है। जैसे ब्रह्म, परमेश्वर, ईश्वर, न्यायकारी, दयालु, सर्वशक्तिमान् आदि नाम परमेश्वर के गुण कर्म स्वभाव से हैं। जैसे ब्रह्म से बड़ा, परमेश्वर ईश्वरों का ईश्वर। ईश्वर सामर्थ्ययुक्त न्यायकारी कभी अन्याय नहीं करता दयालु सब पर कृपादृष्टि रखता, सर्वशक्तिमान् अपने सामर्थ्य ही से सब जगत् की उत्पत्ति स्थिति प्रलय करता, सहाय किसी का नहीं लेता, ब्रह्मा विविध जगत् के पदार्थों का बनाने हारा, विष्णु सब में व्यापक होकर रक्षा करता, महादेव सब देवों का देव, रुद्र प्रलय करने हारा आदि नामों के अर्थों को अपने में धारण करे अर्थात् बड़े कामों से बड़ा हो, समर्थों में समर्थ हो सामर्थ्यों को बढ़ाता जाय, अधर्म कभी न करे, सब पर दया रक्खे, सब प्रकार के साधनों को समर्थ करे, शिल्प विद्या से नाना प्रकार के पदार्थों को बनावे, सब संसार में अपने आत्मा के तुल्य सुख दुःख समझे, सब की रक्षा करे, विद्वानों में विद्वान होवे, दुष्ट कर्म और दुष्टकर्म करने वालों को प्रयत्न से दण्ड और सज्जनों की रक्षा करे, इस प्रकार परमेश्वर के नामों का अर्थ जानकर परमेश्वर के गुण कर्म स्वभावके अनुकूल अपने गुण कर्म स्वभाव को करते जाना ही परमेश्वर का नाम स्मरण है।

# जागरण संदेश

(श्री० दिनकर प्रसाद शुक्ल 'दिनकर' गोहद)

मानव के सोते भाग्य अचल,
 ऽ खोल अतन्द्रित पल,

सुख चेतनता से अपन।
 प्रतिक्षण अभिनव ऽ नूतन,
श्वासों के प्रत्यावर्तन ि ल–
 ले ! विहँस उठा ! हैं परिवर्तन।

कण से लेकर के अनन्त तक—
 है खेल रही कब से हलचल !!
मानव के सोते भाग्य अचल,
 अब तो उठ खोल अतन्द्रित पल ॥

यों पड़ा हुआ कब से सोता,
 अणु अणु दिन दिन जीवन खोता,
उर अथक वेदनायें अपार,
 ले सिसक रहा रह रह रोता,

होता आहुति बन स्वयं—स्वतः,
 रच रहा आत्म-बलिदान प्रबल,
मानव के सोते भाग्य अचल,
 अब तो उठ खोल अतन्द्रित पल ॥

स्वागत नवीनता का करले,
 पलकों में मादकता भरले,
स्पन्दित करदे अवनी अम्बर,
 झंकृत—तन्त्री जागृति—स्वर ले ॥

फिर बिखर पड़े हों सर्वोन्मुख,
 संसृति में शुभ सौभाग्य अटल,
मानव के सोते भाग्य अचल,
 अबतो उठ ! खोल अतन्द्रित पल,

प्रकाशक—श्रीराम शर्मा, "अखण्ड—ज्योति" कार्यालय, मथुरा।
मुद्रक—हरचरन लाल शर्मा, पुष्पराज प्रिन्टिंग वर्क्स, कटरा कसेरट, मथुरा।